घनानन्द

हिन्दी-काव्य की स्वच्छन्द प्रेम-धारा में घनानन्द का स्थान

'स्वच्छन्द काव्य-धारा' से तात्पर्य कविता की उस पद्धति से है जो काव्यशास्त्र द्वारा निर्णीत विधि-विधानों से सर्वथा निरपेक्ष होती है, अपने युग की रचना-पद्धति से पूर्णतया पृथक् होती है, परम्परागत रूढ़ियों से सर्वथा उन्मुक्त होती है, लीक से हटकर चलती है और शास्त्रीय बन्धनों से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र एवं स्वच्छन्द होती है। इसके अतिरिक्त, काव्य की स्वच्छन्द 'प्रेम-धारा' से अभिप्राय ऐसी काव्य-प्रणाली से होता है, जो नैसर्गिक एवं प्रकृत प्रेम से परिपूर्ण होती है, जिसमें प्रेम की कृत्रिमता एवं आडम्बरप्रियता नहीं होती, जो प्रेम की सहज उमंग से ओत-प्रोत होती है, जिसमें प्रेम के सहज भावों का उद्रेक होता है, जो प्रेम की शास्त्र-प्रतिपादित पद्धति का अनुसरण नहीं करती, जिसमें प्रेम की बौद्धिक व्यंजना के स्थान पर प्रेम की भावाभिव्यंजना होती है, जिसमें प्रेम के बाह्य सौन्दर्य के स्थान पर उसके आन्तरिक सौन्दर्य का प्राधान्य होता है, जिसमें बाह्य स्पर्श करने वाले प्रेम-भावों के स्थान पर अन्तर-स्पर्श करने वाले प्रेम के तीव्र भावोद्‌गारों का माधुर्य होता है, जिसमें प्रेम की नवनवोन्मेषशालिनी एवं नवल स्फूर्तिदायिनी भाव-व्यंजना होती है, जो प्रेम के अभिनव सौन्दर्य-विधायक नूतन उपादानों से परिपूर्ण होती है, जो प्रेम के कल्पनारंजित तीव्र भावावेगों से ओत-प्रोत होती है, जिसमें प्रेम की तरल तरंगों में निमग्न हृदय-वीणा की झंकार होती है और जो प्रेम के गूढ़ भावों से भरी होती है। इस दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि **'काव्य की स्वच्छन्द प्रेम-धारा'** उसे कहते हैं, जिसमें प्रेम के रूढ़िगत एवं शास्त्र प्रतिपादित वर्णनों के स्थान पर उसकी सर्वथा नूतन, स्वतन्त्र, स्वच्छन्द एवं स्वाभाविक अभिव्यंजना होती है।

हिन्दी-काव्य की स्वच्छन्द प्रेम-धारा का ऐतिहासिक दृष्टि से अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि सर्वप्रथम **'ढोला मारूरा'** नामक ग्रन्थ में स्वच्छन्द प्रेम का निरूपण हुआ है। इसके लेखक एवं रचनाकाल का तो ठीक-ठीक पता नहीं चला है। यह ग्रन्थ बीकानेर राज्य से प्राप्त एक संग्रह में संकलित है और इसमें ढोला और मारू (मारव) की प्रेम-कहानी है, जिसमें प्रेम का अत्यन्त सुन्दर ढंग से निरूपण हुआ है, किन्तु इसका न तो प्रेम-निरूपण मार्मिक है और न रचना-कौशल ही चित्ताकर्षक है।[1]

इसके उपरान्त **अब्दुर्रहमान** कृत **'संदेश रासक'** नामक काव्य उपलब्ध हुआ है जो 223 छन्दों में लिखित छोटा-सा विरह-प्रधान काव्य है। इसमें कवि ने प्रेम में उन्मत्त स्त्री-पुरुषों के जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत करते हुए पुरुषों को अपनी-अपनी प्रेमिकाओं के लिए शरीर तक का परित्याग कर देने वाला तथा प्रेम में पाप की भी परवाह न करने वाला बताया है। कवि

अब्दुर्रहमान का कहना है कि प्रेम में कुछ भी अनुचित नहीं होता।[1] उसकी यह उक्ति अंग्रेजी की इसी उक्ति के समान है कि प्रेम तथा युद्ध में सब कुछ उचित होता है।[2] इसीलिए यहाँ एक विरहिणी अपने प्रेमी को नाथ, कन्त जैसे मधुर सम्बोधनों के साथ-साथ कायर, दुष्ट, पामर, धृष्ट, तस्कर, मूर्ख, खल, पापी आदि कटु सम्बोधनों से पुकारती है और कहती है कि मैं सघन दुःख में उद्विग्न हूँ। इसलिए मैंने अपने प्रिय के लिए जो कुछ कहा है, उसमें से कठोरता का परित्याग करके उनसे विनयपूर्वक वही कहना जो कुछ उचित हो और जिससे मेरा प्रिय कुपित न हो। यह भी आरम्भिक रचना है और इसका शिल्प-विधान साधारण है।

तत्पश्चात् रसखान कवि कृत **'प्रेम वाटिका'** एवं **'सुजान रसखानि'** नामक ग्रन्थ मिलते हैं, जिनमें कवित्त सवैया छन्द के अन्तर्गत सच्चे प्रेम का निरूपण किया गया है। वैसे रसखान ने भक्ति-सम्बन्धी काव्य की भी रचना की है, परन्तु ध्यानपूर्वक देखा जाए तो इनकी भक्ति-भावना के अन्तर्गत भी इनकी लौकिक प्रेमानुभूति का ही प्राधान्य है और ये भक्त की अपेक्षा प्रेमी कवि अधिक दिखाई देते हैं, क्योंकि प्रेम की उन्मत्तता एवं इश्क के दर्द की विह्वलता इनके एक-एक छन्द से छलकती हुई जान पड़ती है। प्रेम-निरूपण में रसखान ने प्रेम के लौकिक एवं अलौकिक पक्ष का अपनी बुद्धि के अनुसार चित्रण किया है, जिस पर किसी शास्त्रीय पद्धति का प्रभाव नहीं है, अपितु इनकी स्वानुभूति का ही साम्राज्य है। रसखान ने प्रेमी को अकथनीय एवं अनिर्वचनीय कहा है और सागर के समान गम्भीर एवं विस्तृत बताया है। इतना होने पर भी इसकी अभिव्यक्ति में उक्ति-वैचित्र्य एवं उक्ति-सौष्ठव नहीं है। रचना-विधान साधारण है।

तदनन्तर आलम कवि द्वारा लिखित **'माधवानल कामकंदला'** और **'स्याम-सनेही'** नामक दो ऐसे ग्रन्थ मिलते हैं, जिनमें स्वच्छन्द प्रेम का अधिक मनोहारी वर्णन मिलता है। इन दोनों ग्रन्थों पर न तो सूफियों की प्रेम-पद्धति का प्रभाव है और न भक्ति-सम्प्रदाय की प्रेम-पद्धति का, अपितु इनमें प्रेम के लौकिक एवं अलौकिक रूप की स्वतन्त्र एवं उन्मुक्त अभिव्यंजना हुई है। इनकी फुटकल कविताओं का एक संकलन 'आलम-केलि' के नाम से भी मिलता है। ये बड़े ही प्रेमोन्मत्त कवि थे और इनकी सभी कविताओं में प्रेम की तन्मयता भरी हुई है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "ये प्रेमोन्मत्त कवि थे और अपनी तरंग के अनुसार रचना करते थे। इसी से इनकी रचनाओं में हृदय-तत्त्व की प्रधानता है। 'प्रेम की पीर' व 'इश्क का दर्द' इनके एक-एक वाक्य में भरा पाया जाता है।"[3] इतना होने पर भी इनकी रचनाओं में उक्ति-वैचित्र्य एवं उन्नत शब्द-वैचित्र्य के दर्शन नहीं होते।

तत्पश्चात् इस स्वच्छन्द प्रेम-धारा के घनानन्द कृत **'सुजान-हित'**, **'वियोग-बेलि'**, **'इश्कलता'**, **'प्रीति-पावस'**, **'प्रेम-पत्रिका'**, **'प्रेम-सरोवर'**, **'प्रेम-पद्धति'**, **'प्रेम-पहेली'** आदि ग्रन्थ मिलते हैं, जिनमें घनानन्द की प्रेम-सरिता के स्वच्छन्द प्रवाह के दर्शन होते हैं। घनानन्द के इस स्वच्छन्द प्रेम-काव्य में सहज प्रेम-संवेदना एवं तीव्र विरहानुभूति के साथ-साथ उक्ति वैचित्र्य एवं साहित्यिक सौन्दर्य का भी उत्कृष्ट रूप विद्यमान है।

तदनन्तर इस धारा के अन्तर्गत ही ठाकुर कृत **'ठाकुर-ठसक'** एवं **'ठाकुर-शतक'** नामक दो ग्रन्थ मिलते हैं, जिनमें स्वाभाविक तन्मयता के साथ प्रेम-भाव का निरूपण हुआ है।

ठाकुर की विशेषता यह है कि इन्होंने प्रेम-भाव के अतिरिक्त फाग, वसन्त, होली, हिंडोला आदि उत्सवों का भी अत्यन्त विशद चित्रण किया है। इनकी कविता में भी सरसता है, तन्मयता है, तल्लीनता है और सच्ची उमंग है। इसमें कृत्रिमता का लेश भी नहीं है और कहीं भी व्यर्थ के शब्दाडम्बर एवं कल्पना की झूठी उड़ान का प्रयोग नहीं हुआ है। आचार्य शुक्ल ने ठीक ही लिखा है "ठाकुर सच्चे, उदार, भावुक और हृदय के पारखी कवि थे।"[1]

इनके उपरान्त इसी स्वच्छन्द प्रेम-धारा में सुकवि बोधा कृत **'इश्क नामा'** और **'विरह वारीश'** नामक काव्य-ग्रन्थ मिलते हैं। ये भी प्रेम-पुजारी रस-सिद्ध कवि थे। इन्होंने भी कवित और सवैयों के अन्तर्गत 'प्रेम की पीर' एवं विरह-वेदना का इतना मर्मस्पर्शी वर्णन किया है कि जिसे सुनते ही श्रोताओं के हृदय में प्रेम का सागर उमड़ने लगता है और पढ़ते ही पाठक आनन्द-सागर में डुबकियाँ लगाने लगता है। प्रेम-मार्ग के निरूपण में बोधा ने भी स्वानुभूत मनोभावों का उल्लेख किया है। इसी कारण इनके वर्णन में कहीं भी आडम्बर एवं कृत्रिमता के दर्शन नहीं होते और इनकी कला या अभिव्यक्ति भी वैचित्र्यपूर्ण है।

इसके अनन्तर इसी काव्य-धारा में द्विजदेव कृत **'शृंगार-बत्तीसी'** और **'शृंगार-लतिका'** काव्य आते हैं। द्विजदेव ने भी अपने इन काव्यों में प्रेम-शृंगार का अत्यन्त सरस एवं मार्मिक वर्णन किया है। 'द्विजदेव' का वास्तविक नाम महाराजा मानसिंह था और आप अयोध्या के राजा थे। इस स्वच्छन्द काव्य की परम्परा में आप अन्तिम कवि हैं, क्योंकि इसके उपरान्त आधुनिक युग की उन कविताओं का शुभारम्भ हो जाता है, जो भारतेन्दु, द्विवेदी एवं प्रसाद के युग में लिखी गई हैं तथा जिनकी प्रवृत्ति एवं मनोवृत्ति सर्वथा भिन्न हैं। **कुछ विद्वान् प्रसाद कृत 'आँसू' तथा महादेवी की कविताओं को भी इसी स्वच्छन्द प्रेम-धारा में सम्मिलित करते हैं परन्तु इन दोनों के काव्य 'छायावाद' की उस स्वच्छन्दतावादी धारा से सम्बन्ध रखते हैं, जिनकी अनुभूति, प्रवृत्ति भावना एवं संवेदना उक्त स्वच्छन्द प्रेम-धारा से सर्वथा पृथक् हैं।**

इस प्रकार हिन्दी की सम्पूर्ण स्वच्छन्द प्रेम-काव्य-धारा का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि इस धारा के प्रमुख कवियों में से रसखान, आलम, घनानन्द, ठाकुर और बोधा के नाम उल्लेखनीय हैं। ये सभी कवि प्रेम-काव्य के प्रमुख प्रणेता हैं और इन्होंने स्वच्छन्दता के साथ प्रेमानुभूति का बड़ा ही मर्मस्पर्शी वर्णन किया है परन्तु इनमें से घनानन्द सर्वश्रेष्ठ कवि हैं, क्योंकि घनानन्द के काव्य में रसखान की-सी प्रेम की अनिर्वचनीयता भी है, आलम की सी उन्मत्तता भी है, ठाकुर की सी तन्मयता भी है और बोधा की सी रस-सिद्धता भी है, परन्तु इन सबसे बढ़कर घनानन्द में कुछ ऐसे असाधारण काव्य-सौष्ठव के दर्शन होते हैं, जो न रसखान में है, न आलम में है, न ठाकुर में है और न बोधा में ही है। घनानन्द ने 'सुजान' को आलम्बन बनाकर अपनी इस लौकिक प्रेयसी के रूप-सौन्दर्य का इतना मार्मिक एवं मनोरंजक वर्णन किया है कि देखते ही बनता है। सुजान की तिरछी चितवन, घूमते कटाक्ष, रसीली हँसी मृदु-मुस्कान, अरुण होठ, कान्तिमंडित दंतावलि, सचिक्कण केशराशि, वक्रिम भौंहें, विशाल नेत्र, गर्वीली मुद्रा, उन्मत्त यौवन आदि पर मुग्ध घनानन्द ने उसकी 'रूप-निकाई' के अनेक संश्लिष्ट चित्र अंकित करते हुए जहाँ अपनी प्रेम-विभोरता का परिचय दिया है, वहाँ मुहम्मदशाह रंगीले के दरबार की इस नर्तकी के प्रति अपना ऐसा प्रणय-निवेदन किया है, जो हिन्दी-काव्य की स्थायी सम्पत्ति बन गया है। घनानन्द की श्रेष्ठता का सबसे बड़ा कारण यह है कि घनानन्द के हृदय में सुजान के प्रति उत्कृष्ट प्रेम एवं असीम व्यामोह भरा हुआ था, उनके मन में सुजान की अक्षय रूप-राशि समाई हुई थी और उनके प्राणों में सुजान के लिए अनन्त प्यास भरी हुई

थी। इसीलिए घनानन्द का काव्य प्रेम की गूढ़ता से भरा हुआ है, अतृप्ति की अनन्तता से भरा हुआ है, वियोग की असीमता से भरा हुआ है, अशान्ति की गहनता से भरा हुआ है, अन्तर्द्वन्द्व की अलौकिता से भरा हुआ है, वेदना की अक्षयता से भरा हआ है और तीव्रानुभूति की अखंडता से भरा हुआ है। इतना ही नहीं, घनानन्द की जितनी तीव्र एवं गहन अनुभूति है, उतनी ही उनकी उत्कृष्ट एवं समृद्ध अभिव्यक्ति भी है, क्योंकि घनानन्द का सा **उक्ति वैचित्र्य अन्यत्र देखने को नहीं मिलता, उनका सा शब्द-वैचित्र्य किसी भी अन्य प्रेमी-कवि में नहीं है, उनकी सी लाक्षणिकता अन्यत्र नहीं दिखाई देती, उनकी सी वक्रोक्तियाँ अन्य काव्यों में नहीं मिलतीं, उनका सा विरोधमूलक वैचित्र्य और कोई कवि दिखा नहीं सका, है, उनकी सी लाक्षणिक मूर्तिमत्ता किसी की भी रचना में दृष्टिगोचर नहीं होती और उनका सा प्रयोग-वैचित्र्य कहीं ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलता।** निःसन्देह वे जितने प्रेम के धनी थे, उतने ही भाषा के भी धनी थे और उतने ही अभिव्यंजना के भी धनी थे। इसी कारण हिन्दी-काव्य की स्वच्छन्द प्रेम-धारा में घनानन्द का शीर्षस्थ स्थान है।